आंखें विवादों से घिरी रही हैं

डॉ. सुशील जोशी

आंखें जैव विकास के संदर्भ में लंबे समय से विवाद का विषय रही हैं। जैव विकास का सिद्धांत बताता है कि विभिन्न जीव रूप, विभिन्न सजीवों के अंगों व रचना का विकास क्रमशः हुआ है। इस विकास का इस अर्थ में कोई पूर्व निर्धारित उद्देश्य नहीं होता कि फलां रचना का विकास किया जाना है। मगर जैव विकास को न मानने वाले कहते हैं कि समस्त सजीवों समेत पूरी सृष्टि की रचना एक सृष्टा ने सोच-समझकर, सोद्देश्य की है। आप देख ही सकते हैं कि इन दो मतों के बीच कितनाप गंभीर टकराव है।

आंखें इस टकराव के केंद्र में रही हैं। 1802 में विलियम पेली ने इसे समझाने के लिए घड़ीसाज़ की उपमा दी थी। उनका कहना था कि घड़ी जैसी पेचीदा चीज़ की उपस्थिति दर्शाती है कि उसे बनाने वाला कोई घड़ीसाज़ ज़रूर रहा होगा। दूसरे शब्दों में घड़ी जैसी पेचीदा चीज़ का निर्माण बेतरतीब संयोगों के परिणामस्वरूप नहीं हो सकता। इस उपमा के आधार पर 'सृष्टिवादी' कहते रहे हैं कि आंख जैसी जटिल रचना को देखकर यह असंभव लगता है कि इसका निर्माण या विकास बेतरतीब उत्परिवर्तनों के ज़रिए हुआ होगा। एक मायने में वे कहते हैं कि आंखें 'सृष्टा' की उपस्थिति का प्रमाण है।

मगर जैव विकास का अध्ययन करने वाले बताते हैं कि दरअसल आंखों की रचना इस बात का प्रमाण है कि यह अंग मूलतः बेतरतीब जुगाड़ का परिणाम है। इसके पक्ष में वे आंखों की रचना के एक विशेष पक्ष की ओर ध्यान दिलाते हैं। यह विशेष पक्ष है हमारी व अन्य स्तनधारियों की आंखों में एक अंध बिंदु की उपस्थिति। आगे बढ़ने से पहले आप यह देख लें कि अंध बिंदु होता क्या है। मूलतः अंध बिंदु से तात्पर्य यह है कि हमारी दोनों आंखों में एक हिस्सा होता है जहां हमें दिखाई नहीं देता। यदि विश्वास नहीं होता तो बॉक्स में दी गई विधि से जांच कर लें।

यह अंध बिंदु क्यों है?

अंध बिंदु को समझने के लिए आंख की रचना पर नज़र डालनी होगी। हमारी आंखें एक गेंद जैसी हैं। इसकी खोल लगभग पूरी अपारदर्शी है। सामने की तरफ इसका एक छोटा-सा हिस्सा पारदर्शी है। इसे आंख का तारा कहते हैं। इसी में लेंस होता है जो प्रकाश को आंख के पिछले भाग में फोकस करता है। आंख के पिछले भाग को रेटिना कहते हैं। रेटिना पर बड़ी संख्या में प्रकाश संवेदी कोशिकाएं हैं। जब इन पर प्रकाश पड़ता है तो इनमें जैव-रासायनिक क्रिया होती है और इससे एक विद्युत संकेत पैदा होता है। इस विद्युत संकेत को दिमाग तक पहुंचाने का काम तंत्रिकाएं करती हैं। यहां एक दिलचस्प तथ्य है।

यदि सोच-समझकर आंखों की रचना बनाई जाएगी तो यह स्वाभाविक होगा कि ये तंत्रिकाएं प्रकाश संवेदी कोशिकाओं के पीछे होंगी। मगर हमारी आंखों में तंत्रिका

आंख का अंध बिंदु

इसे 'देखने' का सबसे आसान तरीका यह रहा। अपने दोनों हाथों की तर्जनी उंगलियों को आंखों के सामने करीब 6 इंच दूर रखें। आंखें किसी एक उंगली पर गड़ाएं। अब दूसरी उंगली को धीरे-धीरे साइड में ले जाएं। आप देखेंगे कि कुछ देर बाद वह उंगली दिखाई देना बंद हो जाती है। यदि उसे थोड़ा और साइड में ले जाएंगे तो एक बार फिर दिखने लगेगी। जिस बिंदु पर उंगली दिखाई देनी बंद हो जाती है, उस जगह से आंख में रोशनी पहुंचने पर नज़र नहीं आती; वह अंध बिंदु है।

कोशिकाएं प्रकाश संवेदी कोशिकाओं के सामने हैं। यानी जब प्रकाश लेंस से होकर रेटिना पर पहुंचता है तो पहले वह तंत्रिका कोशिकाओं से टकराता है। ये तंत्रिका कोशिकाएं कुछ प्रकाश को बिखेरती हैं। प्रकाश को बिखरने से भी ज़्यादा बड़ी समस्या दूसरी है जिसका सम्बंध आंख के अंध बिंदु से है।

तंत्रिका कोशिकाओं के अलावा प्रकाश संवेदी कोशिकाओं पर एक अन्य किस्म की कोशिकाओं की दो-तीन परतें होती हैं। इन कोशिकाओं को मुलर कोशिकाएं कहते हैं। माना जाता है इनकी वजह से संवेदी कोशिकाओं तक पूरा प्रकाश नहीं पहुंच पाता।

परंतु पहले तंत्रिकाओं की बात पूरी कर लें। अंततः सारी प्रकाश तंत्रिकाएं रेटिना के पीछे की ओर जाती हैं। रचना कुछ ऐसी है कि सारी तंत्रिकाएं रेटिना के केंद्र की ओर बढ़ती हैं और बीच में एक जगह से रेटिना को पार करके पीछे की ओर निकलती हैं। इस स्थान को पैपिला कहते हैं। इस जगह पर इतनी सारी तंत्रिकाओं का झुंड-सा बन जाता है कि प्रकाश संवेदी कोशिकाओं के लिए जगह ही नहीं बचती। इस बिंदु पर रेटिना प्रकाश के प्रति असंवेदी होता है। रेटिना के इस भाग पर रोशनी पड़े तो इसका संकेत दिमाग को नहीं जाता। यही आंख का अंध बिंदु है (चित्र 1)।

जैव विकास के अध्येता कहते हैं कि यदि कोई 'घड़ीसाज़' होता तो ऐसा कभी न करता - वह तंत्रिकाओं को प्रकाश संवेदी कोशिकाओं के पीछे रखता ताकि अंध बिंदु न बने। और मुलर कोशिकाओं को भी प्रकाश संवेदी कोशिकाओं के पीछे रखना ही बेहतर होता। रेटिना की यह विचित्र उल्टी रचना क्रमिक जैव विकास का एक प्रमाण है। इससे पता चलता है कि जैव विकास में लगातार पहले उपस्थित रचनाओं में छोटे-मोटे परिवर्तन होते हैं और नई रचनाएं बनती हैं। इस प्रक्रिया में ज़रूरी नहीं कि दोषरहित चीज़ ही बने। पहले मौजूद रचना नई रचना पर कई सीमाएं आरोपित कर देती है।

यानी अंगों और रचनाओं में खामियां हमें बताती हैं कि ये सब किसी सोची-समझी डिज़ाइन के तहत नहीं बने हैं बल्कि छोटे-मोटे परिवर्तनों के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आए हैं। मगर अब इस बहस में एक नया आयाम जुड़ गया है।

खामी का गुण

हमने देखा कि तंत्रिकाओं को प्रकाश संवेदी कोशिकाओं के सामने रखने की वजह से अंध बिंदु पैदा होता है। सामान्य देखने की क्रिया के दौरान आपका ध्यान इस बात पर नहीं जाता क्योंकि दिमाग उस हिस्से को 'भर' देता है। हमने यह भी देखा कि प्रकाश संवेदी कोशिकाओं तक पहुंचने से पहले प्रकाश को कुछ अन्य कोशिकाओं की परत से भी गुज़रना होता है। इनमें मुलर कोशिकाएं प्रमुख होती हैं।

मुलर कोशिकाएं शंक्वाकार होती हैं। इनका चौड़ा वाला हिस्सा अंदर की ओर तथा संकरा वाला हिस्सा प्रकाश संवेदी कोशिकाओं की ओर होता है (देखें चित्र 2)। ऐसा माना जाता था कि इनकी वजह से प्रकाश बिखरता होगा और संवेदी कोशिकाओं को कम प्रकाश मिलता होगा। मगर लिपज़िग विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट कॉलेज के एण्ड्रीयास राइनबैक और जोकेन गक के दल ने जब रेटिना में प्रकाश के गमन का अध्ययन किया तो पाया कि मुलर कोशिकाएं ऑप्टिकल फाइबर के समान कार्य करती हैं और प्रकाश को फोकस करने में ही मदद

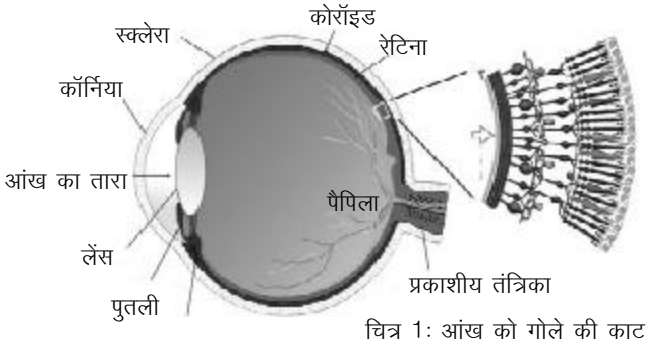

चित्र 1: आंख को गोले की काट

करती हैं।

हाल ही में हाइफा स्थित टेक्निऑन-इस्राइल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी के अमिचाई लेबिन और एरेज़ राइबेक ने मानव नेत्र की कोशिकाओं की जानकारी के आधार पर रेटिना के कामकाज का एक मॉडल तैयार किया है। उनके परिणाम भी बताते हैं कि दरअसल प्रकाश को मुलर कोशिकाओं की परत में से गुज़ारने से फायदा होता है।

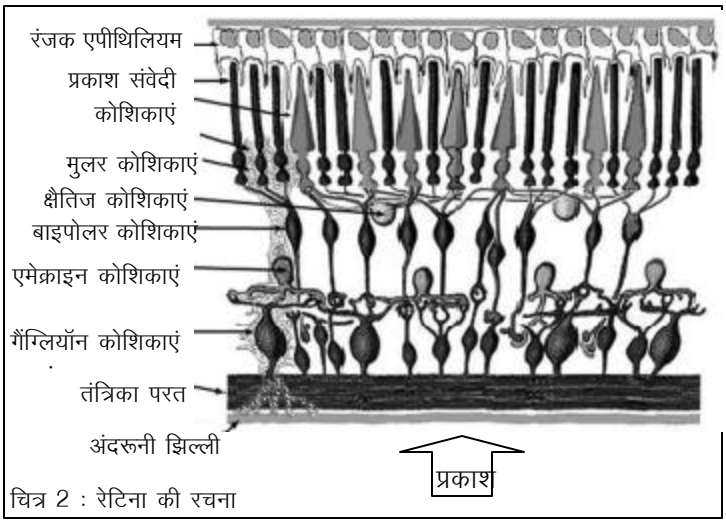

चित्र 2 : रेटिना की रचना

अमिचाई व राइबेक बताते हैं कि आंखों में दो तरह का प्रकाश होता है। एक तो वह होता है जो पुतली में से सीधे आया है। दूसरा वह होता है जो आंख के अंदर की सतह से परावर्तित हुआ है। मॉडल से पता चला है कि मुलर कोशिकाओं की उपस्थिति का फायदा यह होता है कि सीधे पुतली से आने वाला प्रकाश रेटिना की प्रकाश संवेदी कोशिकाओं तक अधिक पहुंचता है जबकि आंख की अंदरूनी सतह से परावर्तित होने वाला अधिकांश प्रकाश मुलर कोशिकाओं से टकराकर बिखर जाता है। इससे ज़्यादा स्पष्ट प्रतिबिंब रेटिना पर बनता है। दूसरे शब्दों में मुलर कोशिकाएं एक छन्नी की तरह काम करती हैं।

इसके अलावा मुलर कोशिकाओं की वजह से रंगीन प्रकाश को सही फोकस करने में भी मदद मिलती है। जब रोशनी लेंस से होकर गुज़रती है तो प्रिज़्म के समान उसके रंग कुछ हद तक अलग-अलग हो जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि कुछ रंग ठीक से फोकस नहीं हो पाते। मुलर कोशिकाएं इन अलग-अलग हुए रंगों को फिर से इकट्ठा करने में भी मदद करती हैं।

कुल मिलाकर अमिचाई व राइबेक का कहना है कि मुलर कोशिकाएं दृष्टि को ज़्यादा स्पष्ट व पैना बनाने में मदद करती हैं।

इतना सुनना था कि सृष्टिवादी लोगों को जैसे नया तर्क मिल गया। उन्होंने फौरन यह मत व्यक्त किया कि देखिए, हम तो कह ही रहे थे कि आंख की रचना जैसी भी है, सोच-समझकर, फायदे के लिए बनाई गई है। वैसे सृष्टिवादियों की एक आम आदत रही है कि जब भी जीव वैज्ञानिक कोई नया अनुसंधान या खोज करते हैं, सृष्टिवादी उसका हवाला देकर अपनी बात को पुष्ट करने में भिड़ जाते हैं।

वैज्ञानिकों का मत है कि यह संयोग है कि मुलर कोशिकाएं इस तरह की भूमिका निभा रही हैं। मतलब प्रकाश संवेदी कोशिकाओं को तंत्रिका कोशिकाओं और मुलर कोशिकाओं के पीछे रखने की वजह से जो समस्या पैदा हुई थी, प्रकृति ने यथासंभव उससे लाभ भी उठाया। यह जैव विकास का एक खास गुण है - मौजूदा रचनाओं का नाना प्रकार से इस्तेमाल करना। और मुलर कोशिकाओं से जो थोड़ा फायदा हो रहा है, उसके मुकाबले अंध बिंदु की वजह से नुकसान भी कम नहीं है। खैर, यह बहस तो चलती रहेगी। ***(स्रोत फीचर्स)***